झारखंड उच्च न्यायालय, रांची

एल.पी.ए. संख्या 407/2023

श्रीस्तीधर महतो, उम्र- लगभग 70 वर्ष, पिता- स्वर्गीय बैद्यनाथ महतो, निवासी- पटेल नगर, सड़क संख्याख्या- 15, लक्ष्मी अपार्टमेंट के पास, डाकघर और थाना- हटिया, और जिला- -रांची।

... रिट याचिकाकर्ता/अपीलार्थी

बनाम

1. झारखंड राज्य
2. प्रधान सचिव, कार्मिक विभाग, प्रशासनिक सुधार और राजभाषा, झारखंड सरकार, परियोजना भवन, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला- रांची।
3. प्रधान सचिव, वित्त विभाग, झारखंड सरकार, परियोजना भवन, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला- रांची।

....प्रतिवादीगण/ प्रतिवादीगण

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद
माननीय न्यायमूर्ति नवनीत कुमार

अपीलार्थी के लिए :श्री मनोज टंडन, अधिवक्ता।
प्रतिवादियों के लिए :श्री जय प्रकाश, एएजी-आईए।

सी.ए.वी. दिनांक 07/11/2023 निर्णय दिनांक 01/12/2023
द्वारा, न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद।

1. लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत तत्काल अपील, रिट याचिका (एस) संख्याख्या 7335/2016 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित 15.06.2023 के निर्णय/आदेश के खिलाफ निर्देशित है।, जिसके द्वारा और जिसके तहत रिट याचिका को दिनांक 24.08.2016 के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार करते हुए खारिज कर दिया गया है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदन, रिट याचिका (एस) संख्याख्या 5307/2014 अस्वीकार कर दिया गया है।

2. रिट याचिका में की गई अभिवचन के अनुसार मामले के संक्षिप्त तथ्यों को इस प्रकार पढ़ा जा सकता हैः

3. याचिकाकर्ता को राज्य सूचना आयुक्त के रूप में पत्र संख्या 3899 दिनांक 26.07.2006 को

पांच अन्य लोगों के साथ नियुक्त किया गया। तदनुसार, याचिकाकर्ता 30.07.2006 को राज्य सूचना आयुक्त के रूप में शामिल हुए और अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना शुरू कर दिया और पांच साल के कार्यकाल की समाप्ति के बाद 31.07.2011 को अपना पद छोड़ दिया।

4. दिनांक 31.07.2011 को कार्यालय छोड़ने के बाद, याचिकाकर्ता ने सेवानिवृत्त लाभों के लिए संबंधित प्रतिवादी के समक्ष अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, लेकिन इसने कोई प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं की, जैसे कि वह , रिट याचिका (एस) संख्या 5307/2014 दायर इस न्यायालय के समक्ष दायर किया गया, जिसका निपटान दिनांक 16.03.2016 के आदेश द्वारा किया गया था, जिसमें संबंधित प्रत्यर्थी को बारह सप्ताह की अवधि के भीतर कानून के अनुसार याचिकाकर्ता के सेवानिवृत्ति के बाद और अन्य अंतिम लाभों के दावे के मामले में एक सूचित निर्णय लेने का निर्देश दिया गया था।

5. रिट याचिका (एस) संख्या 5307/2014 में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्देश के संदर्भ में, याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी-प्राधिकरणों से संपर्क किया और एक विस्तृत अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, लेकिन प्रत्यर्थी-प्राधिकरणों ने याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन का निपटान नहीं किया और मामले पर बैठ गए, जैसे कि याचिकाकर्ता ने अवमानना मामला दायर किया अवमानना मामला (दीवानी) संख्या 476/2016। तथापि, अवमानना याचिका के लंबित रहने के दौरान याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन का निर्णय दिनांक 24.08.2016 के आदेश द्वारा किया गया था, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता के दावे को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया था कि चूंकि राज्य सूचना आयुक्त की सेवा शर्त राज्य के मुख्य सचिव के समतुल्य है और नई पेंशन योजना जो दिनांक 01.01.2004 से प्रभाव में है, उक्त पद के लिए पेंशन का कोई प्रावधान नहीं है।

6. इससे व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने फिर से रिट याचिका (एस) संख्या 7335/2016 फाइल करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। जिसे दिनांक 15.06.2023 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिसके खिलाफ अपीलार्थी-लिखित याचिकाकर्ता द्वारा तत्काल अंतर-न्यायालय अपील दायर की गई है।

7. रिट याचिकाकर्ता-अपीलार्थी के विद्वान वकील ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पर निम्नलिखित आधारों पर हमला किया हैः

I. कि कानून सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (संक्षेप में 'अधिनियम, 2005') की धारा 16 (5) के प्रावधान को ध्यान में रखते हुए एक नियम तैयार करने की अपेक्षा करता है, लेकिन फिर भी राज्य सरकार ने राज्य सूचना आयुक्त के पद के धारक को दिए जाने वाले पेंशन लाभ के लिए प्रावधान करके नियम तैयार नहीं किया है।

II. कि रिट याचिकाकर्ता को नियुक्त किया गया था और नियुक्ति की शर्त के अनुसार अपना कार्यकाल पूरा किया गया था, लेकिन पेंशन लाभ नहीं दिया गया है जो बिल्कुल अवैध और मनमाना है।

III. यह कि रिट याचिकाकर्ता ने यद्यपि पूर्व में रिट याचिका डब्ल्यू.पी.(एस) संख्या 5307/2014 दायर की थी, जिसका दिनांक 16.03.2016 के आदेश द्वारा निपटारा कर दिया गया था, जिसमें

रिट याचिकाकर्ता को अपने दावे पर विचार करने के लिए अभ्यावेदन दायर करने की स्वतंत्रता दी गई थी, लेकिन दावे पर विचार करते समय प्रतिवादी-प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन को दिनांक 24.08.2016 के आदेश द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया कि रिट याचिकाकर्ता कभी भी ऐसी सेवा में नहीं था, जिसे पेंशन योग्य सेवा कहा जाता है, इसलिए अधिनियम, 2005 के संशोधन से पूर्व की धारा 16(5) के तहत निर्धारित शर्त लागू होगी, जिसमें विशिष्ट प्रावधान किया गया है कि पेंशन लाभ मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त को दिया जाना है, जो उक्त पद पर नियुक्ति के समय सेवा में थे। पेंशन योग्य सेवा में था, लेकिन यहां रिट याचिकाकर्ता कभी भी पेंशन योग्य सेवा में नहीं था, बल्कि उसे सीधे राज्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया गया था, इसलिए अधिनियम, 2005 की धारा 16 (5) के असंशोधित प्रावधान के मद्देनजर, जिसे अधिनियम, 2019 के आधार पर संशोधित किया गया है। दिनांक 24.10.2019 को रिट याचिकाकर्ता के दावे को खारिज कर दिया गया है, लेकिन ऐसा निर्णय लेते समय संबंधित प्राधिकारी ने इस तथ्य को नहीं समझा कि समान पद पर पदस्थ मुख्य सूचना आयुक्त अर्थात् माननीय न्यायमूर्ति श्री हरि शंकर प्रसाद, इस न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश को राज्य मुख्य सूचना आयुक्त का कार्यकाल पूरा होने के बाद पेंशन का लाभ दिया गया है, इसलिए प्राधिकारी ने रिट याचिकाकर्ता के दावे को खारिज करते समय रिट याचिकाकर्ता के साथ भेदभाव किया है, लेकिन विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा उक्त तथ्य को नहीं समझा गया। इसलिए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश त्रुटिपूर्ण है।

IV. जब अधिदेश के लिए अधिनियम, 2005 की धारा 16 (5) के अनुसार एक नियम तैयार करने की आवश्यकता होती है, तो राज्य सूचना आयुक्त की पेंशन के मुद्दे को नियंत्रित करने के लिए एक नियम तैयार करना राज्य सरकार का दायित्व है, लेकिन फिर भी नियम तैयार नहीं किया गया है, जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश ने उक्त दावे को नकारते हुए सही भावना में राज्य सरकार को इस आधार पर निर्देश देने से इनकार कर दिया है कि चूंकि यह नीतिगत निर्णय से संबंधित है, इसलिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय को किसी नियम को तैयार करने के लिए राज्य को निर्देश देने वाला कोई आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि यह नियम तैयार करने के लिए राज्य का विशेषाधिकार है। विद्वत एकल न्यायाधीश का उपरोक्त निष्कर्ष न्यायोचित नहीं है क्योंकि क़ानून नियम से बाहर तैयार करने के लिए अधिदेशित करता है इसलिए नियम को राज्य सरकार द्वारा तैयार किए जाने की आवश्यकता है।

8. उपर्युक्त आधार के आधार पर अपीलार्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि चूंकि विद्वान एकल न्यायाधीश ने मामले के इन पहलुओं की सराहना नहीं की है, इसलिए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश त्रुटि से ग्रस्त है और इस तरह कानून की नजर में टिकाऊ नहीं है।

9. इसके विपरीत, श्री जय प्रकाश, एएजी-आईए, प्रतिवादियों-राज्य की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् अधिवक्ता ने निम्नलिखित आधारों को लेते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का बचाव किया हैः

I. कि विद्वत एकल न्यायाधीश ने विशेष रूप से गैर-संशोधित प्रावधान के आधार पर तथ्यात्मक

पहलू की अच्छी तरह से सराहना की है, जो 24.10.2019 से पहले था, जिसमें प्रावधान किया गया है कि पेंशन का लाभ राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के पद के पदधारी को दिया जाना है, जो नियुक्ति की तारीख से पहले पेंशन योग्य सेवा में है। उपर्युक्त प्रावधान के अनुसार पेंशन के पद के धारक के पदधारी को पेंशन लाभ के लिए हकदार बनाया गया है, लेकिन यहां तत्काल मामले में रिट याचिकाकर्ता ने पेंशन योग्य सेवा में राज्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्ति से पहले कभी सेवा नहीं की है, इसलिए अधिनियम, 2005 के प्रावधान को देखते हुए रिट याचिकाकर्ता पेंशन लाभ के लिए हकदार नहीं है, क्योंकि वह उस दिन राज्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया गया था जब अधिनियम, 2005 का प्रावधान लागू था और बाद में शोधित प्रावधान जो प्रभाव में आया 24.10.2019 , उपरोक्त प्रावधान के निरसन पर।

II. विद्वान् एएजी-आईए रिट याचिकाकर्ता के दावे का जवाब देते हुए कि धारा 16 (5) के प्रावधान को देखते हुए नियम तैयार करने की आवश्यकता है, ने प्रस्तुत किया है कि वैधानिक आदेश के अनुसार, यह विवादित नहीं है, कि नियम तैयार किया जाना है, लेकिन यहां सवाल यह है कि रिट याचिकाकर्ता अधिनियम, 2019 की धारा 16 (5) के प्रावधान पर भरोसा कर रहा है, यानी, संशोधित नियम जो प्रभाव में आया 24.10.2019 2019 के अधिनियम 24 के आधार पर और उसके द्वारा याचिकाकर्ता सेवा से सेवानिवृत्त हो गया था।

III. इसके अलावा, यहां प्रश्न यह होगा कि भले ही नियम तैयार किया जाएगा, रिट याचिकाकर्ता लागू नियम के आलोक में पेंशन लाभ प्राप्त करने की स्थिति में नहीं होगा, जो 24.10.2019 से पहले लागू था क्योंकि रिट याचिकाकर्ता को 30.07.2006 को नियुक्त किया गया था और 31.07.2011 को अपना कार्यकाल पूरा किया था, जो कि गैर-संशोधित नियम की निर्वाह अवधि के दौरान था। अगर नियम भी बनाया जाता तो भी रिट याचिकाकर्ता को पेंशन की पात्रता के लिए कोई लाभ नहीं मिलता।

IV. जहाँ तक अपीलार्थी की ओर से यह तर्क दिया गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने नियम बनाने के लिए आदेश/आदेश जारी नहीं करने में गलती की है, यह एक नीतिगत निर्णय है जो राज्य के अनन्य अधिकार क्षेत्र के तहत है जिसे विद्वान राज्य के वकील के अनुसार अनुचित नहीं कहा जा सकता है क्योंकि चूंकि यह नीतिगत निर्णय है जो राज्य का अनन्य अधिकार क्षेत्र है और भले ही इसे तैयार किया जाएगा, याचिकाकर्ता को किसी भी तरह से इस तथ्य के कारण लाभ नहीं होने वाला है कि यदि कोई नियम तैयार किया जाता है तो उसका संभावित अनुप्रयोग होगा न कि पूर्वव्यापी अनुप्रयोग।

V. आगे जिस दिन रिट याचिकाकर्ता को नियुक्त किया गया था और उसका कार्यकाल पूरा हुआ था, उस दिन पहले से ही नियम था।

10. उक्त आधार के आधार पर विद्वत एएजी-आईए ने प्रस्तुत किया है कि विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में कोई त्रुटि नहीं है इसलिए आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

11. हमने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है, रिकॉर्ड पर उपलब्ध दस्तावेजों के साथ-साथ विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों का भी अध्ययन किया है।

12. इस मामले में निर्विवाद तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता को 26.07.2006 को राज्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया गया था, जहां उन्होंने 30.07.2006 को अपनी नियुक्ति दी थी और पांच साल का कार्यकाल पूरा होने के बाद 31.07.2011 को अपना पद छोड़ दिया था। कार्यालय छोड़ने के बाद, याचिकाकर्ता ने सेवानिवृत्त लाभों के अनुदान के लिए संबंधित प्रतिवादी के समक्ष अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, लेकिन इसने कोई प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं की, जैसे कि वह रिट याचिका (एस) संख्या 5307/2014 होने के कारण रिट याचिका दायर करके इस न्यायालय के समक्ष गया, जिसका निपटान दिनांक 16.03.2016 के आदेश द्वारा किया गया था, जिसमें संबंधित प्रत्यर्थी को बारह सप्ताह की अवधि के भीतर कानून के अनुसार याचिकाकर्ता के सेवानिवृत्ति के बाद और अन्य अंतिम लाभों के दावे के मामले में एक सूचित निर्णय लेने का निर्देश दिया गया था। इसके संदर्भ में, याचिकाकर्ता ने प्रतिवादियों- प्राधिकरणों के समक्ष एक विस्तृत अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसका निर्णय दिनांक 24.08.2016 के आदेश द्वारा किया गया था, जिसके तहत याचिकाकर्ता के दावे को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया था कि चूंकि राज्य सूचना आयुक्त की सेवा शर्त राज्य के मुख्य सचिव के बराबर है और 01.01.2004 के प्रभाव से नई पेंशन योजना शुरू की गई है जहां पेंशन और सामान्य भविष्य निधि का कोई प्रावधान नहीं है।

13. प्रतिवादियों- प्राधिकरणों द्वारा पारित दिनांक 24.08.2016 के आदेश से व्यथित होने के कारण, याचिकाकर्ता ने फिर से. रिट याचिका (एस) संख्या 7335/2016 दायर करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, जिसे दिनांक 15.06.2023 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिसके खिलाफ तत्काल अंतर-न्यायालय अपील दायर की गई है।

14. इस न्यायालय ने पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा दिए गए तर्क पर विचार करते हुए निम्नलिखित मुद्दों को तैयार किया जिनका उत्तर दिया जाना हैः

I. क्या राज्य अधिनियम, 2005 की धारा 16 (5) के अधिदेश के अनुसार पेंशन के मुद्दे को नियंत्रित करने वाले नियम को तैयार करने के लिए कर्तव्यबद्ध है?

II. क्या रिट याचिकाकर्ता को पेंशन के लाभ से केवल इसलिए वंचित किया जा सकता है क्योंकि उसे उस दिन किसी पेंशन योग्य सेवा में नियुक्त नहीं किया गया था जब उसे राज्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया गया था?

III. क्या विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा इस आशय से अभिलिखित निष्कर्ष कि नियम से बाहर रचना करना राज्य का अनन्य अधिकार क्षेत्र है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य को नीतिगत निर्णय तैयार करने का आदेश जारी करके उच्च न्यायालय द्वारा कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है, इसे सही निष्कर्ष कहा जा सकता है?

15. चूंकि सभी मुद्दे आपस में जुड़े हुए हैं, इसलिए उन्हें एक साथ उठाया जा रहा है ताकि उनका जवाब दिया जा सके।

16. लेकिन उपरोक्त मुद्दों पर चर्चा करने से पहले अधिनियम, 2005 के प्रासंगिक प्रावधान को यहां जो, अधिनियम, 2005 (संशोधित) की धारा 16 (5) में संदर्भित करने की आवश्यकता है जो निम्नानुसार हैः

पद की अवधि और सेवा की शर्तें।

(1) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त पद धारण करेगा [ऐसी अवधि के लिए जो केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित की जाए] और पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगाः
बशर्ते कि कोई भी राज्य मुख्य सूचना आयुक्त पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद इस प्रकार का पद धारण नहीं करेगा।

(2) प्रत्येक राज्य सूचना आयुक्त पद धारण करेगा [ऐसी अवधि के लिए जो केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित की जाए] या जब तक वह पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर लेता है, जो भी पहले हो, और ऐसे राज्य सूचना आयुक्त के रूप में पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगाः
परन्तु प्रत्येक राज्य सूचना आयुक्त, इस उपधारा के अधीन अपना पद रिक्त करने पर, धारा 15 की उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट रीति से राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगाः

बशर्ते कि जहां राज्य सूचना आयुक्त को राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया जाता है, वहां उसका कार्यकाल राज्य सूचना आयुक्त और राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में कुल मिलाकर पांच वर्ष से अधिक नहीं होगा।

(3) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, अपना पद ग्रहण करने से पहले राज्यपाल या उस निमित्त उसके द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष प्रथम अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए निर्धारित प्रपत्र के अनुसार शपथ या प्रतिज्ञान करेगा और उसमें हस्ताक्षर करेगा।

(4) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, किसी भी समय, राज्यपाल को संबोधित अपने हाथ के नीचे लिख कर, अपने पद से इस्तीफा दे सकता हैः

बशर्ते कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त को धारा 17 के तहत निर्दिष्ट तरीके से हटाया जा सकता है।

[(5) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों को देय वेतन और भत्ते और सेवा के अन्य नियम और शर्तें ऐसी होंगी जो केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित की जाएं:

बशर्ते कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों के वेतन, भत्ते और सेवा की अन्य शर्तें उनकी नियुक्ति के बाद उनके नुकसान के लिए भिन्न नहीं होंगीः
बशर्ते कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना का अधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2019 के प्रारंभ से पहले नियुक्त राज्य सूचना आयुक्त इस अधिनियम के प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों द्वारा शासित होते रहेंगे जैसे कि सूचना का अधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2019 लागू नहीं हुआ था।]

(6) राज्य सरकार राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों को ऐसे अधिकारी और कर्मचारी प्रदान करेगी जो इस अधिनियम के तहत अपने कार्यों के कुशल प्रदर्शन के लिए आवश्यक हों, और इस अधिनियम के उद्देश्य के लिए नियुक्त अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को देय वेतन और भत्ते और सेवा के नियम और शर्तें ऐसी होंगी जो निर्धारित की जाएं।

17. यह उपरोक्त प्रावधान से स्पष्ट है कि अधिनियम, 2005 की धारा 16 (5) के तहत प्रतिस्थापित प्रावधान को वैधानिक प्रावधान में लाया गया है जो प्रभाव में है 24.10.2019 अधिनियम, 2019 द्वारा प्रतिस्थापित और उपधारा (5) के तहत इसके प्रतिस्थापन से पहले निम्नलिखित प्रावधान थेः

"देय वेतन और भत्ते तथा सेवा की अन्य शर्तें और नियम-

(क) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त को देय वेतन और भत्ते और सेवा के अन्य नियम और शर्तें निर्वाचन आयुक्त के समान होंगी।

(ख) राज्य सूचना आयुक्त राज्य सरकार के मुख्य सचिव के समान होगा। परन्तु यदि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, अपनी नियुक्ति के समय, भारत सरकार के अधीन या किसी राज्य सरकार के अधीन किसी पूर्व सेवा के संबंध में, अक्षमता या घाव पेंशन से भिन्न पेंशन की प्राप्ति में है, तो राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसका वेतन उस पेंशन की राशि से घटा दिया जाएगा, जिसमें पेंशन का कोई भाग जो परिवर्तित किया गया था और सेवानिवृत्ति उपदान के समतुल्य पेंशन को छोड़कर सेवानिवृत्ति लाभों के अन्य रूपों के समतुल्य पेंशन शामिल हैः

परन्तु यह और कि जहां राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, अपनी नियुक्ति के समय, किसी केन्द्रीय अधिनियम या राज्य अधिनियम या केंद्र सरकार या राज्य सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण वाली सरकारी कंपनी द्वारा या उसके अधीन स्थापित किसी निगम में प्रदत्त किसी पूर्व सेवा के संबंध में सेवानिवृत्ति लाभों की प्राप्ति में है, वहां राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसका वेतन सेवानिवृत्ति लाभों के समतुल्य पेंशन की राशि से घटा दिया जाएगाः

बशर्ते कि राज्य के मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों के वेतन, भत्ते और सेवा की अन्य शर्तों में उनकी नियुक्ति के बाद उनके नुकसान के लिए परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

18. इसमें आगे यह उल्लेख किया गया है कि बशर्ते कि यदि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, अपनी नियुक्ति के समय, भारत सरकार के अधीन या किसी राज्य सरकार के अधीन किसी पूर्व सेवा के संबंध में विकलांगता या घाव पेंशन के अलावा किसी पेंशन की प्राप्ति में है, तो राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसका वेतन उस पेंशन की राशि से घटा दिया जाएगा, जिसमें पेंशन का कोई भी हिस्सा शामिल है, जो सेवानिवृत्ति ग्रेच्युटी के समतुल्य पेंशन को छोड़कर सेवानिवृत्ति लाभों के अन्य रूपों के समतुल्य है।

19. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त दोनों की सेवा के नियमों और शर्तों के संबंध में दो शर्तें इस शर्त के अधीन थीं कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के पद का धारक उस नियुक्ति में होना चाहिए जहां वह उक्त पद का पदधारी था, जैसा भी मामला पेंशन की प्राप्ति में हो; जिसका अर्थ है कि पेंशन की पात्रता के लिए बहुत शर्त राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त के पद के धारक की नियुक्ति पर निर्भर करती है यदि वे पेंशन योग्य सेवा में थे ताकि ऊपर उल्लिखित परंतुक में निर्धारित शर्त के अनुसार पेंशन का लाभ निर्धारित किया जा सके।

20. उपरोक्त प्रावधान को संशोधित किया गया और क़ानून की पुस्तक में डाला गया। 24.10.2019 के प्रभाव से जिसके द्वारा और जिसके अधीन एक नया उपबंध इस आशय से किया गया है कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त को देय वेतन और भत्ते और सेवा के अन्य नियम और शर्तें ऐसी होंगी जो केन्द्रीय सरकार द्वारा उपबंधित की जाएं, बशर्ते कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त के वेतन, भत्ते और सेवा की अन्य शर्तें उनकी नियुक्ति के पश्चात् उनके लाभ के लिए भिन्न न हों। बशर्ते कि आर. टी. आई. (संख्याशोधन) अधिनियम, 2019 के प्रारंभ से पहले नियुक्त राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त इस अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों के प्रावधानों द्वारा शासित होते रहेंगे, जैसे कि आर. टी. आई. अधिनियम, 2019 लागू नहीं हुआ था।

21. इसलिए, संशोधित प्रावधान के आधार पर यह स्पष्ट है कि संशोधित अधिनियम के प्रभाव में आने से पहले और अब कानून की पुस्तक में मौजूद है, सभी सेवा शर्तों को इस अधिनियम के प्रावधान और उसके तहत बनाए गए नियमों द्वारा शासित कहा जाएगा, जैसे कि आरटीआई अधिनियम लागू नहीं हुआ था, जिसका अर्थ है कि 24.10.2019 को या उसके बाद उप-धारा (5) में जो प्रावधान था, उसे हटा दिया जाएगा और सेवा की शर्त धारा 16 की उपधारा (5) के तहत अब उपलब्ध संशोधित प्रावधान को प्रतिस्थापित करके शासित की जाएगी, जिसमें पेंशन जारी करने के संबंध में कोई शर्त नहीं है, जहां तक किसी भी राज्य के मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के पद पर सीधे नियुक्त किए गए अधिकारियों का संबंध है।

22. अपीलार्थी के विद्वान वकील ने अधिनियम, 2005 की धारा 27 की सहायता भी ली है, जो उपयुक्त सरकार को नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। यह तर्क दिया गया है कि जब धारा 27 के तहत विशिष्ट प्रावधान है तो राज्य सरकार पेंशन को नियंत्रित करने वाले नियम क्यों नहीं बना रही है। इसलिए, यह न्यायालय अधिनियम की धारा 27 को संदर्भित करना उचित समझता है, जो निम्नानुसार हैः

27. उपयुक्त सरकार द्वारा नियम बनाने की शक्तिः- (1) उपयुक्त सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए नियम बना सकती है। (2) विशेष रूप से, और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किसी भी मामले के लिए उपबंध कर सकते हैं, अर्थात्ः-

(क) धारा 4 की उपधारा (4) के अधीन प्रसारित की जाने वाली सामग्री के माध्यम या मुद्रण लागत मूल्य की लागत;

(ख) धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन देय शुल्क;

(ग) धारा 7 की उपधारा (1) और (5) के अधीन देय शुल्क;

(घ) धारा 13 की उपधारा (6) के अधीन अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को देय वेतन और भत्ते और सेवा के नियम और शर्तें और उपयुक्त सरकार द्वारा नियम बनाने की शक्ति। धारा 1- 21 धारा 16 की उपधारा (6) को निरस्त करना;

(ङ) धारा 19 की उपधारा (10) के अधीन अपीलों का विनिश्चय करने में केन्द्रीय सूचना आयोग या यथास्थिति राज्य सूचना आयोग द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया; और

(च) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना अपेक्षित है या किया जा सकता है।

23. उपर्युक्त उपबंध से यह अधिक विशेष रूप से धारा 27 (2) (घ) के अधीन अंतर्विष्ट उपबंध से स्पष्ट है जिसमें यह निबंधन किया गया है कि धारा 13 की उपधारा (6) के अधीन अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को देय वेतन और भत्ते और सेवा के नियम और शर्तें और धारा 16 की उपयुक्त सरकारी उपधारा (6) द्वारा नियम बनाने की शक्ति।

24. इसलिए, जहां तक अधिनियम, 2005 की धारा 27 के निहितार्थ के संबंध में रिट याचिकाकर्ता-अपीलार्थी की ओर से दिए गए तर्क का संबंध है, हमारा विचार 'अधिकृत क्षेत्र' के सिद्धांत के आधार पर है कि चूंकि प्रासंगिक प्रावधान पहले से ही था इसलिए धारा 27 जिसमें कोई संशोधन नहीं किया गया था, धारा 16 (5) के गैर-संशोधित प्रावधान के साथ पढ़ा जाना है, जिसमें पेंशन के लाभ के लिए राज्य सूचना आयुक्त के पद के पदधारी को रखने के लिए विशिष्ट शर्त है, याचिकाकर्ता पेंशन का हकदार नहीं है।

25. आगे यह तर्क दिया गया है कि चूंकि राज्य सूचना आयुक्त का पद राज्य के मुख्य सचिव के पद के बराबर है, इसलिए पेंशन सहित ऐसा ही लाभ राज्य सूचना आयुक्त के पद के धारक को दिया जाना है, लेकिन धारा 16 (5) के गैर-संशोधित प्रावधान के साथ पठित धारा 27 के प्रावधान के आधार पर हमारे सुविचारित विचार के अनुसार यह केवल वेतन और भत्तों तक ही सीमित है।

26. प्राधिकरण इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि राज्य सूचना आयुक्त के पद के धारक को मुख्य सचिव के नियमों और शर्तों के अनुसार लाभ दिया गया है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि केवल इसलिए कि मुख्य सचिव का पद पेंशन योग्य है, इसलिए पदधारी पेंशन योग्य सेवा का हकदार होगा, यह इस कारण से है कि मुख्य सचिव जिस दिन सेवा में आया था उस दिन पेंशन योग्य सेवा में था, लेकिन रिट याचिकाकर्ता जब सेवा में आया था तो यह पेंशन योग्य नहीं था, विशेष रूप से क्योंकि पेंशन के मुद्दे को नियंत्रित करने वाली गैर-संशोधित धारा 16 (5) के तहत पहले से ही एक नियम था और इस तरह से रिट याचिकाकर्ता के लिए पेंशन लाभ के दावे के संबंध में मुख्य सचिव के साथ समानता का दावा करना उपलब्ध नहीं है।

27. इसके अलावा यह मुद्दा उठाया गया है कि राज्य सरकार नियम क्यों नहीं बना रही है। इस तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं है कि जब वैधानिक आवश्यकता उपयुक्त सरकार द्वारा नियम तैयार करने की होती है तो यह नियम बनाने के लिए उपयुक्त सरकार का दायित्व होता है,

लेकिन यहां मामले के दिए गए तथ्यों में एक सवाल यह होगा कि भले ही नियम तैयार किया जाए या नहीं।

28. हमारे सुविचारित दृष्टिकोण के अनुसार, तत्काल मामले के तथ्यों के आधार पर, भले ही अभी तक राज्य सरकार द्वारा नियम तैयार किया गया हो, रिट याचिकाकर्ता को इस कारण से पेंशन का हकदार नहीं ठहराया जाएगा कि जब रिट याचिकाकर्ता ने 30.07.2006 को अपने कर्तव्य का निर्वहन करना शुरू किया था और 31.07.2011 को अपना पद छोड़ दिया था, यानी जिस दिन रिट याचिकाकर्ता को नियुक्त किया गया था और उसका पद छोड़ दिया गया था, उस दिन नियम का अस्तित्व नहीं था जैसा कि अब धारा 16 (5) के तहत मौजूद था, बल्कि दूसरा प्रावधान 24.10.2019 से पहले था, जिसमें ऐसे पदों पर नियुक्ति के समय राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त की नियुक्ति के आधार पर पेंशन तय करने और घायल पेंशन की विकलांगता के अलावा पेंशन की प्राप्ति के लिए प्रावधान किया गया है।

29. इसलिए, इस न्यायालय का विचार है कि यदि 24.10.2019 से पहले राज्य सूचना आयुक्त के पद की पेंशन निर्धारित करने के लिए नियम पहले से ही मौजूद था, जब रिट याचिकाकर्ता को नियुक्त किया गया था और उसका पद छोड़ दिया गया था, तो 'अधिकृत क्षेत्र' के सिद्धांत पर एक नया नियम तैयार करने के लिए निर्देश मांगने का कोई सवाल ही नहीं है।

30. विधि अच्छी तरह से स्थापित है कि यदि नियम पहले से ही उपलब्ध है तो 'अधिकृत क्षेत्र' के सिद्धांत पर नियम बनाने का कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने चंद्र प्रकाश तिवारी और अन्य बनाम शकुंतला शुक्ला और अन्य ((2002) 6 एससीसी 127) के मामले में कहा है। जिसे अनुच्छेद 14 में निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गया हैः

"14. यह इस संदर्भ में भी इस न्यायालय का निर्णय है कृष्णा बनाम कर्नाटक राज्य [(1998) 3 एससीसी 495:1998 एससीसी (एल एंड एस) 906] जहां इस न्यायालय ने मैक्सवेल की विधियों की व्याख्या (11वीं संस्करण, पृष्ठ 168) के संदर्भ में और सीवार्ड बनाम वेरा क्रूज़ [(1884) 10 अधिनियम 59: (1881-85) में सिद्धांत से संबंधित निर्णय का भी बार-बार उल्लेख किया है] निम्नलिखित रूप में वर्णित हैः (एससीसी पीपी। 499-500, अनुच्छेद 9-13)

"9. इसमें कोई संदेह नहीं है कि संविधान के अनुच्छेद 309 और अधिनियम की धारा 39 के तहत नियम बनाने का अधिकार एक ही है, अर्थात् सरकार (सटीक रूप से, राज्यपाल, अनुच्छेद 309 के तहत और सरकार धारा 39 के तहत) लेकिन दोनों अधिकार क्षेत्र अलग-अलग हैं। जैसा कि ऊपर देखा गया है, अनुच्छेद 309 के तहत शक्ति का प्रयोग राज्यपाल द्वारा नहीं किया जा सकता है, यदि विधायिका ने पहले ही एक कानून बना लिया है और क्षेत्र पर कब्जा कर लिया है। उस स्थिति में, नियम विधायिका द्वारा बनाए गए कानून के तहत बनाए जा सकते हैं, न कि अनुच्छेद 309 के तहत। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि किसी अधिनियम के तहत दी गई नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियम प्रत्यायोजित या अधीनस्थ विधान का गठन करते हैं, लेकिन अनुच्छेद 309 के तहत नियमों को उस श्रेणी में नहीं माना जा सकता है और इसलिए, 'अधिकृत क्षेत्र' के सिद्धांत पर, अनुच्छेद 309 के तहत नियम विधायिका द्वारा बनाए गए नियमों का स्थान नहीं ले सकते हैं।

10. जहां तक 1977 में संशोधित सामान्य भर्ती नियमों द्वारा अधिनियम की धारा 39 के तहत बनाए गए नियमों के निहित अधिक्रमण का प्रश्न है, यह इंगित किया जा सकता है कि मैक्सवेल के क़ानूनों की व्याख्या (11 वीं संस्करण, पृष्ठ 168) में निर्धारित मूल सिद्धांत यह हैः

"एक सामान्य बाद का कानून केवल निहितार्थ से पहले के विशेष नियम को निरस्त नहीं करता है। जनरलिया स्पेशलाइबस गैर-अपमानजनक, या, दूसरे शब्दों में, "जहां बाद के अधिनियम में सामान्य शब्द हैं जो पहले के विधान द्वारा विशेष रूप से निपटाए गए विषयों पर विस्तार किए बिना उचित और विवेकपूर्ण अनुप्रयोग करने में सक्षम हैं, तो आपको यह नहीं मानना है कि पूर्व और विशेष विधान अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे सामान्य शब्दों के बल से अप्रत्यक्ष रूप से निरस्त, परिवर्तित या अपमानित किया गया है, ऐसा करने के लिए किसी विशेष इरादे का कोई संख्याकेत नहीं है। ऐसे मामलों में यह माना जाता है कि केवल सामान्य मामलों को ध्यान में रखा गया है, न कि विशेष मामलों को जो पहले से ही विशेष अधिनियम द्वारा अन्यथा प्रदान किए गए हैं।

11. इस सिद्धांत को वेरा क्रूज मामले (सेवार्ड बनाम वेरा क्रूज [(1884) 10 एसी 59: (1881-85) ऑल ईआर रेप 216:52 एलटी 474 (एचएल)] में निम्नानुसार दोहराया गया थाः

'यहाँ बाद के अधिनियम में सामान्य शब्द हैं जो उन्हें पहले के विधान द्वारा विशेष रूप से निपटाए गए विषयों तक विस्तारित किए बिना उचित और विवेकपूर्ण अनुप्रयोग में सक्षम हैं... कि पहले और विशेष विधान को अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे सामान्य शब्दों के बल से निरसित, परिवर्तित या अपमानित नहीं किया जाना है, ऐसा करने के लिए किसी विशेष इरादे का कोई संख्याकेत नहीं है।'

12. वेरा क्रूज मामला [(1884) 10 एसी 59: (1881-85) सभी ईआर प्रतिनिधि 216:52 एलटी 474 (एचएल)] एलीन लुईस निकोल बनाम जॉन विंटर निकोल [(1922) 1 ए. सी. 284] में निम्नलिखित का अनुसरण किया गया थाः "इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह सभी न्यायशास्त्र का एक ठोस सिद्धांत है कि एक पूर्व विशेष कानून को एक उत्तरवर्ती कानून द्वारा आसानी से निरस्त नहीं किया जा सकता है, जिसे सामान्य शब्दों में व्यक्त किया जाता है और इसकी भाषा की स्पष्ट व्यापकता लागू होती है और कई मामलों को कवर करती है जिनमें विशेष कानून एक है।'

13. उपरोक्त प्रभाव के लिए, महाराजा प्रताप सिंह बहादुर बनाम ठाकुर मनमोहन डे [ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1931:1966 बी. एल. जे. आर. 997] मामले में इस न्यायालय का निर्णय भी है जिसमें यह संकेत दिया गया था कि पहले के विशेष कानून को केवल निहितार्थ से निरस्त नहीं किया जा सकता है। ऐसा होने पर, निहित अधिस्थगन के बारे में तर्क को ऊपर बताए गए दोनों कारणों से खारिज किया जाना चाहिए।

31. इसमें यह तथ्य स्वीकार किया गया है कि क्षेत्र पर 24.10.2019 से पहले ही कब्जा कर लिया गया था और यह 24.10.2019 के बाद ही राज्य के मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के वेतन और सेवा के अन्य नियमों और शर्तों को नियंत्रित करने के लिए क़ानून पुस्तिका में एक नया नियम जोड़ा गया है। जैसे कि जब पेंशन के दावे का निर्णय करने के लिए क्षेत्र को नियंत्रित करने वाला नियम पहले से ही उपलब्ध था, तब उस समय पहले से मौजूद नियम के स्थान पर नया नियम तैयार करने के लिए राज्य को आदेश जारी करने का कोई

सवाल ही नहीं है और यदि ऐसा निर्देश भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा जारी किया जाएगा, तो यह "अधिकृत क्षेत्र" के सिद्धांत पर अपनी अधिकारिता से अधिक कुछ नहीं होगा।

32. आगे प्रश्न यह होगा कि नियुक्त किए जाने के समय रिट याचिकाकर्ता इस तथ्य के बारे में अच्छी तरह से जानता था कि वह पेंशन लाभ को नियंत्रित करने के लिए पेंशन योग्य सेवा में नहीं है, बल्कि उसने पहली बार पांच साल का कार्यकाल पूरा करने के बाद पद छोड़ने के बाद ऐसा दावा किया है, जिसे हमारे सुविचारित दृष्टिकोण के अनुसार इस आधार पर टिकाऊ नहीं कहा जा सकता है कि एक बार रिट याचिकाकर्ता ने वैधानिक प्रावधान के आधार पर नियुक्ति के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है, जैसा कि अस्तित्व में था, तब भी वही नियम था जब उसने पद छोड़ दिया था, वह इस कारण से उसे पेंशन लाभ के लिए हकदार ठहराते हुए एक नया नियम तैयार करने के निर्देश पर जोर नहीं दे सकता था कि यदि कोई नियुक्ति की जा रही है तो वही मौजूदा नियम द्वारा शासित होना है जो उस समय प्रचलित था जब नियुक्ति की गई थी या उस दिन भी जब संबंधित पदधारी ने पद छोड़ दिया था।

33. जहां तक रिट याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष कि नियम तैयार करने के लिए कोई निर्देश नहीं हो सकता है क्योंकि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त बहुत सीमित शक्ति है, हमें उक्त निष्कर्ष में कोई त्रुटि नहीं मिलती है क्योंकि यह नियम पहले से ही था जब याचिकाकर्ता पद छोड़ रहा था और इस तरह 'अधिकृत दायर' के सिद्धांत पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय से कोई निर्देश पारित करने की आवश्यकता नहीं थी, जहां तक पेंशन के दावे का संबंध है, रिट याचिकाकर्ता को लाभ देने के उद्देश्य से एक प्रतिस्थापित नियम होना चाहिए।

34. यह भी तर्क दिया गया है कि अन्य राज्यों ने भी नियम तैयार किया है और जैसे कि यहां भी जो, झारखंड राज्य में नियम तैयार किया जाना चाहिए था।

35. कानून अच्छी तरह से तय है कि यदि किसी राज्य ने एक नियम तैयार किया है उच्च न्यायालय द्वारा दूसरे राज्य की उक्त कार्रवाई के आधार पर एक ही नियम के साथ आने का आदेश नहीं दिया जा सकता है क्योंकि यह राज्य सरकार का पूर्ण विशेषाधिकार है कि वह विशेष नियम के साथ आए और यदि राज्य आगे नहीं आ रहा है तो ऐसा निर्णय लेना राज्य पर है और संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत राज्य को कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है क्योंकि नियम बनाना/नीति बनाना राज्य सरकार का पूर्ण अधिकार क्षेत्र है, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अशोक पांडे बनाम भारत के सर्वोच्च न्यायालय के मामले में अपने रजिस्ट्रार और अन्य के माध्यम से अभिनिर्धारित किया गया है [(2018) 5 एससीसी 341], जिसमें अनुच्छेद 11 में यह अभिनिर्धारित किया गया हैः

"11. भारत के मुख्य न्यायाधीश के अधिकार की इस बाध्यकारी व्याख्या को देखते हुए, याचिकाकर्ता जो राहत चाहता है, वह स्पष्ट रूप से गलत है। एक बात के लिए, यह एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि कोई भी परमादेश किसी निकाय या प्राधिकरण को निर्देश देने के लिए जारी नहीं कर सकता है, जिसके पास नियम बनाने की शक्ति है या उन्हें एक विशेष

तरीके से बनाने की शक्ति है। उच्चतम न्यायालय को प्रक्रिया के नियम बनाने के लिए अनुच्छेद 145 के तहत अधिकृत किया गया है। प्रकृति का एक परमादेश जारी नहीं किया जा सकता है। इसी तरह, याचिकाकर्ता को यह निर्देश देने का अधिकार नहीं है कि इस न्यायालय की पीठों का गठन एक विशेष तरीके से किया जाना चाहिए या, जैसा कि वह चाहता है, कि इस न्यायालय के अलग-अलग विभाग होने चाहिए। पूर्व विशेष रूप से मुख्य न्यायधीश की विशेषाधिकार शक्तियों के क्षेत्र में निहित है।"

36. जहां तक नीतिगत निर्णय में राज्य के मामलों में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत बैठे न्यायालय के हस्तक्षेप का संबंध है, कानून अच्छी तरह से स्थापित है।

37. यह कानून की स्थिर स्थिति है कि राज्य सरकार के नीतिगत निर्णय में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने में उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि यह मनमाना न हो और द्वेष या किसी अन्य बुराई से ग्रस्त न हो।

38. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा के.नागराज और अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य [(1985) 1 SCC 523] में दिए गए निर्णय में, जिसमें सेवानिवृत्ति की आयु को 58 से घटाकर 55 वर्ष करने का मुद्दा था, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए प्रसन्नता व्यक्त की है कि यह निर्णय समाज के युवा वर्गों को रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए नीतिगत निर्णय के आधार पर लिया गया था और निचले स्तरों पर कर्मचारियों को उनके कैरियर की शुरुआत में पदोन्नति के अवसर खोलने की आवश्यकता थी और चूंकि यह उचित विचार पर आधारित है, इसलिए इसमें हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया गया था।

39. झारखंड राज्य और अन्य बनाम अशोक कुमार डांगी और अन्य [(2011) 13 एस. सी. सी. 383] के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 17 पर अभिनिर्धारित किया है जो निम्नानुसार हैः -

"17. उच्च न्यायालय ने पाया है कि झारखंड सरकार, आज तक, शारीरिक प्रशिक्षित उम्मीदवारों द्वारा भरे जाने वाले पदों की संख्या के संबंध में कोई नीति नहीं बनाई थी। हमारी राय में, शारीरिक रूप से प्रशिक्षित उम्मीदवारों द्वारा प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के कितने पदों को भरा जाए, यह अनिवार्य रूप से राज्य को तय करने के लिए नीति का प्रश्न है। नीति के निर्माण में, विभिन्न इनपुट की आवश्यकता होती है और यह न तो वांछनीय है और न ही किसी न्यायालय के लिए यह सलाह दी जाती है कि वह सरकार को किसी विशेष नीति को अपनाने के लिए निर्देश या सारांश दे जो उसे उपयुक्त या उचित लगे। यह अच्छी तरह से तय है कि राज्य सरकार को नीति बनाने में स्वतंत्रता होनी चाहिए। इसके अलावा, इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि अदालतें प्रतिस्पर्धी दावों और परस्पर विरोधी हितों से निपटने में अक्षम हैं। अक्सर, अदालतों के पास यह तय करने के लिए संतोषजनक और प्रभावी साधन नहीं होते हैं कि मामले की परिस्थितियों में कई प्रतिस्पर्धी विकल्पों में से कौन सा विकल्प सबसे अच्छा है।"

40. इस प्रकार, यह निर्धारित किया गया है कि राज्य सरकार को नीति बनाने में स्वतंत्रता होनी चाहिए।

41. इसके अतिरिक्त, जनगणना आयुक्त और अन्य बनाम आर. कृष्णमूर्ति [(2015) 2 एस. सी. सी. 796] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 25 को निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया हैः-

25. "नीति निर्णय और एक विशेष तरीके से एक नीति फ्रेम करने के लिए मैंडेमस में हस्तक्षेप करना बिल्कुल अलग हैं। अधिनियम ने केंद्र सरकार को जनगणना करने के तरीके के बारे में अधिसूचना जारी करने की शक्ति प्रदान की है और केंद्र सरकार ने अधिसूचना जारी की है, और सक्षम प्राधिकारी ने निर्देश जारी किए हैं। कानून बनाना अदालत के अधिकार क्षेत्र में नहीं है। अदालतें कानून की व्याख्या करती हैं और ऐसी व्याख्या में कुछ रचनात्मक प्रक्रिया शामिल होती है। अदालतों के पास कानून को असंवैधानिक घोषित करने का अधिकार क्षेत्र है। वह भी, जहाँ इसे बुलाया जाता है। न्यायालय संवैधानिक मौन या स्थगन के सिद्धांत को लागू करते हुए कुछ क्षेत्रों में कमियों को भी भर सकता है। लेकिन, अदालतों को अनिवार्य रिट जारी करके नीति में कुछ जोड़कर नीति-निर्माण में नहीं आना चाहिए। हमने शुरुआत में जो कहा है उसे याद रखने के लिए वहां न्यायिक संयम की आवश्यकता है। अदालतों को कार्यपालिका द्वारा बनाए गए नीतिगत निर्णयों को समझने की आवश्यकता होती है। यदि कोई नीतिगत निर्णय या अधिसूचना मनमाना है, तो यह संविधान के अनुच्छेद 14 को अस्वीकार कर सकता है। लेकिन जब अधिसूचना हमलावर नहीं थी और यह अधिनियम के अनुरूप है, तो यह वास्तव में समझ से परे है कि उच्च न्यायालय कुछ पहलुओं को जोड़कर जनगणना करने के तरीके के बारे में निर्देश कैसे जारी कर सकता है। वास्तव में, यह एक विशिष्ट तरीके से नीति तैयार करने के लिए एक निर्देश जारी करना है।"

42. इसके अलावा नियम बनाने का कोई सवाल ही नहीं है क्योंकि नियम पहले से ही उपलब्ध था और 'अधिकृत क्षेत्र' के सिद्धांत पर नियम बनाने की कोई आवश्यकता नहीं थी और इसलिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा आदेश जारी करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

43. सभी मुद्दों का जवाब उसी के अनुसार दिया जाता है।

44. इस न्यायालय ने, उपर्युक्त चर्चा और संख्यापूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश पर विचार किया है और उसमें पाया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने तथ्यों के साथ-साथ सभी कानूनी मुद्दों की सराहना की है और इसलिए आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया है, जिसे हमारे सुविचारित दृष्टिकोण के अनुसार किसी त्रुटि से ग्रस्त नहीं कहा जा सकता है।

45. तदनुसार, तत्काल अपील विफल हो जाती है और खारिज कर दी जाती है।

46. लंबित अंतर्वर्ती आवेदन, यदि कोई हो, खारिज कर दिया जाता है।

मैं सहमत हूं। (न्यायमूर्ति, सुजीत नारायण प्रसाद)

(न्यायमूर्ति, नवनीत कुमार,) (न्यायमूर्ति,नवनीत कुमार,)

यह अनुवाद पैनल अनुवादक मदन मोहन प्रिय द्वारा किया गया है।